IMPACT FACTOR 5.397 (SJIF USA)
बिहार शोध समागम
BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 4, Issue 1, January-March, 2026
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
ISSN : 3048-6971

स्वाधीनता आन्दोलन और दलित चेतना

अंशु कुमारी (शोधार्थी)
विश्वविद्यालय हिंदी विभाग
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा
ayanshi2018.ansh@gmail.com

शोध सार:
स्वाधीनता आंदोलन की शुरुआत सन्1857 की क्रांति से माना जाता है । इसे प्रथम स्वतंत्रता संग्राम या सिपाही विद्रोह से शुरू होकर सन् 1947 में भारत की आजादी तक चला । जिसमें कई चरणों में आंदोलन हुए यह भी कह सकते हैं कि स्वाधीनता आंदोलन की शुरुआत 19वीं सदी के उत्तरार्ध और 20वीं सदी के आरंभ में हो गई थी ।जिसमें भारत के नागरिक विदेशी शासन से मुक्ति की मांग कर रहे थे लेकिन भारतीय समाज का बड़ा तबका जो दबी कुचले दलित वर्ग अपनी मानवीय गरिमा की मांग कर रहे थे । क्योंकि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन केवल विदेशी अंग्रेजी शासन से मुक्ति का संघर्ष नहीं था बल्कि वह दौर सामाजिक सांस्कृतिक और वैचारिक पुनर्निर्माण की प्रक्रिया भी थी। राष्ट्रीय आंदोलन के साथ-साथ ही भारतीय समाज के भीतर व्याप्त जाति आधारित विषमता छुआछूत और सामाजिक अन्याय के विरुद्ध दलित चेतना का विकास भी हो रहा था।विदेशी सत्ता से मुक्ति मिलने पर भी दलितों की स्थिति में कोई बदलाव नहीं देखा जा सकता है क्योंकि वर्ण व्यवस्था आधारित श्रम का विभाजन किया गया था सिर्फ इसलिए कि हिंदू धार्मिक ग्रंथ ने वर्ण व्यवस्था के साथ ही उसका कार्य क्षेत्र का भी चुनाव कर दिया था
उसका पालन दलित समाज को जबरदस्ती करनी पड़ती थी इसका एक ही कारण था जन्म के आधार पर जाति का व्यवस्था एवं क्रूरता को कर्तव्य स्वरूप पालन करना कर्तव्य समझते थे ।दलितों के साथ शारीरिक श्रम बहुत ही कठिन लिया जाता था श्रम के बदले में श्रम की राशि बहुत कम या घर का बचा हुआ जूठन पर यह दलित समाज पलता था कितना शर्मनाक बात है कि अंग्रेजों के शोषण से मुक्ति पा लेना चाहते हैं लेकिन अपने ही देश के दलित समाज को शोषण दमन की ओर अपनी दृष्टि नहीं डालते है ।

बीज शब्द : स्वतंत्रता, दलित, अधिकार, शोषण, आन्दोलन, अंग्रेज, मानवता, चेतना, सामाजिक व्यवस्था एवं गरीबी ।

मूल आलेख : स्वतंत्रता संग्राम में कई तरह के आंदोलन जैसे स्वदेशी आंदोलन ,असहयोग आंदोलन ,सविनय अवज्ञा आंदोलन और भारत छोड़ो आंदोलन शामिल थे महात्मा गांधी ने अहिंसक तरीकों से आंदोलन करने के पक्षधर रहे थे ।लेकिन उस समय भीतर ही भीतर दलित आंदोलन भी चल रहे थे ।कांग्रेस में शामिल समाजवादी क्रांतिकारी संगठन और कम्युनिस्ट पार्टी के अस्तित्व में आने से पूरे देश में इस सवाल को आम बना दिया गया कि आजाद भारत किस तरह का होना चाहिए इस बात का नतीजा था कांग्रेस में 1930 में पूर्ण आजादी की मांग रखी जनता को इस बात का विश्वास दिलाया गया कि आजाद भारत में जमींदारी प्रथा खत्म कर दी जाएगी और भूमि सुधार लाया जाएगा।लेकिन आजादी के इस चरण में दो महत्वपूर्ण मुद्दे और उभर कर आए भारत के बहुसंख्यक हिंदू जनता में जातिवाद के विरोध में चलाए गए आंदोलन अंग्रेजी की जातिवादी विरोधी नीतियों और स्वयं दलित वर्ग में उभर रहे हैं बुद्धिजीवियों द्वारा चलाए जा रहे आंदोलन ने इस बात को मुख्य मुद्दा बना दिया कि निम्न समझी जाने वाली जातियां आजादी के बाद क्या इस तरह शोषण का शिकार होते रहेंगे। उनके साथ वैसा ही अमानुषिक व्यवहार किया जाएगा यह एक ऐसा मुद्दा था जिसका राजनीतिक लाभ उठाने की कोशिश में अंग्रेजों की सत्ता ने किया । सन् 1932 में अंग्रेजों ने दलितों के लिए अलग निर्वाचन मंडल का सुझाव दिया था था । जिसका का विरोध गांधी जी ने किया और लागू नही हो पाया । गांधी जी ने कहा इस तरह से दलितों के लिए अलग निर्वाचन मंडल होने से हिन्दु समाज में विभाजन हो सकता है उनका कहना था कि कांग्रेस सारे हिन्दुस्तान का प्रतिनिधित्व करता है। अंततः गांधी जी और बाबा साहब अंबेडकर के बीच पुणे में एक समझौता हुआ जिसे ' पूना पैक्ट' के नाम से जाना जाता है ।इस समझौते से बाबा साहेब

अंबेडकर और भारतीय दलित वर्ग बहुत दुःखी हो गए। दलित जातियों की सामाजिक आर्थिक विकास के लिए प्रयत्न करना एक महत्वपूर्ण मुद्दा बन गया । भारत में दलित जातियों के साथ किसी भी तरह का भेदभाव नहीं किया जाएगा और उनको सभी नागरिकता अधिकार प्राप्त कराया जाएगा । समकालीन समय में दलितों की स्थिति मिली जुली है सामाजिक रूप से आज भी भेदभाव के बहिष्कार और हिंसा का सामना करते हैं जबकि शैक्षणिक क्षेत्र और आर्थिक क्षेत्र में आरक्षण जागरूकता आए लेकिन उसे शिक्षा और सरकारी नौकरियों में इनका प्रतिनिधित्व बहुत कम है गरीबी और बुनियादी सुविधाओं की कमी जैसी चुनौतियां बनी हुई है । संवैधानिक स्तर परदलितों की आवाज मजबूत हुई है लेकिन सामाजिक समानता और पूर्ण सशक्त करना भी एक दूर का लक्ष्य है क्योंकि जातिगत पूर्वाग्रह और भेदभाव कई रूपों में वर्तमान समय में भी हो कायम है । जातिवादी मानसिकता के कारण कितने दलित बच्चे युवा , युवती एवं बूढ़े जातिगत हिंसा का शिकार हुए हैं । वर्तमान में भी SC / ST एक्ट के तहत ऐसे मामले सामने आए हैं जो मनुष्यता के स्वभाव पर प्रश्न चिन्ह लगाते हैं कि एक मनुष्य दूसरे मनुष्य के साथ इतना हिंसक सिर्फ जातिवादी मानसिकता के कारण ही कर सकते हैं

विज्ञान की थ्योरी के संदर्भ के रूप में प्रस्तुत करें तो यह कह सकते हैं कि न्यूटन का तीसरा नियम 'प्रत्येक क्रिया के विपरीत प्रतिक्रिया होती है, शायद वही प्रतिक्रिया दलितों के भीतर उत्पन्न हुआ कि मेरे साथ होने वाला शोषण से मुक्ति का प्रतिक्रिया कैसी और क्यों करना आवश्यक है ? इसी प्रतिक्रिया को दलित चेतना कह सकते हैं दलित चेतना ने यह प्रश्न उठाया की राजनीतिक स्वतंत्रता तब तक अधूरी है जब तक की सामाजिक समानता नहीं है। अगर मानवीय गरिमा सुनिश्चित नही है तो स्वाधीनता निरर्थक है। स्वाधीनता आंदोलन के समय कांग्रेस सत्ता चला रहे थे स्वतंत्र भारत लोकतांत्रिक पद पर कांग्रेस पार्टी स्थापित हुए । देश का नेतृत्व मुख्यतः उच्च एवं मध्यवर्गीय समाज के . हाथों जिसके कारण समाज के सबसे वंचित वर्गों विशेषत: दलितों के प्रश्न हाशिये पर चले गए । जिससे दलितों की स्थिति और ही खराब होती गई धीरे-धीरे अपने अधिकार के प्रति सुगबुगाहट शुरू हुआ यह स्वाभाविक बात मनुष्य किसी भी जाति धर्म के हो अपने ऊपर होने वाले अन्याय को अन्याय कहने की चेतना भी दिशा प्रदान करती है। वर्तमान समय के युवा वर्ग में भी सामाजिक चेतना जागृत हो रहा है। जो सत्ता और समाज से अपने स्थिति पर तार्किक ढंग से प्रश्न कर रहे है । जो जाति आधारित भेदभाव , उत्पीड़न और बहिष्कार के अपने साक्षा अनुभव ही दलित चेतना (Dalit Consciousness) है।दलित की व्यथा ,दुख , पीड़ा शोषण का विवरण देना या बखान करना ही दलित चेतन नहीं है या दलित पीड़ा का भावुक और अश्रु विगलित वर्णन ,जो मौलिक चेतना से विहीन हो ,चेतन का संबंध सीधा दृष्टि से होता है । जो दलितों की संस्कृति ऐतिहासिक सामाजिक भूमिका की छवि तिलस्म को तोड़ती है वह है दलित चेतना ।दलित चेतना के कारण हीं मानवीय गरिमा अधिकारों और पहचानों को स्थापित हो पाया है।जिसे दलित साहित्य और आंदोलन के माध्यम से व्यक्त किया जाता है जो सवर्ण मानसिकता और वर्चस्ववादी व्यवस्था को चुनौती देता है ।

महात्मा ज्योतिबा फुले सन् 1873 में 'सत्यशोधक समाज की स्थापना की इसका मुख्य उद्देश्य ऊंची जाति की वर्चस्व और ब्राह्मणवादी वर्चस्व के खिलाफ एक शक्तिशाली शक्ति को जड़ से नष्ट करना जिसके लिए वे महिलाओं और निचली जाति के लोगों के लिए शिक्षा का प्रसार करना शुरू किया

"ज्योतिबा फुले आधुनिक भारत में क्रांतिकारी सामाजिक परिवर्तन आंदोलन के मूल प्रवर्तक है,यह बात सिद्ध करने के लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं है उनके साहित्य को पढ़ने से ही इस बात का पता चल जाता है कि उन्होंने किस तरह हिंदू समाज के शुद्रादि - अतिशुद्रो की समस्याओं को उजागर करने की कोशिश की है "1

ज्योतिबा फुले से महात्मा ज्योतिबा फुले बनने का सफर काफी कठिन था लेकिन बिना थके बिना हारे आजीवन अपने आंदोलन को जारी रखा वे पत्नी के साथ मिलकर इससे हम कह सकते हैं भारत के समाज सुधारकों में इनका स्थान अग्रणी समाज सुधारक के रूप में स्मरण करना चाहिए । शैक्षणिक क्रांति की शुरुआत सन्1848 में महात्मा फुले और सावित्रीबाई फुले ने महिला की शिक्षा के लिए पुणे में तात्यासाहेब भिड़े के आवास में भारत का पहला लड़कियों का विद्यालय स्थापित किया और सावित्रीबाई भारत की पहली महिला शिक्षिका बनी उन्होंने सन् 1855 में मजदूर किसानों और महिलाओं के लिए रात्रि विद्यालय की शुरुआत किए। उन्होंने प्रगतिशील

विचारधाराए जो महिलाओं के पक्ष में विधवा पूर्नविवाह ,विधवाओं को अनाथों के लिए आश्रयगृह स्थापित किया। स्वतंत्रता संग्राम सन्1857 का विद्रोह एवं सामाजिक स्वतंत्रता के लिए सन्1855 में स्थापित विद्यालय जो किसानों मजदूरों और महिलाओं के लिए किया गया तो यह कह सकते हैं कि देश में स्वतंत्रता आंदोलन शैक्षणिक आंदोलन या सुधार आंदोलन साथ-साथ चल रहे थे।

महात्मा फुले आधुनिक भारत का निर्माण करना चाहते थे जिसमें प्रत्येक नागरिक के लिए गरिमा और मानवीय अधिकार सुनिश्चित करना था जिसके फलस्वरुप हिंदू धर्म के स्थान पर सार्वजनिक 'सत्य धर्म' का विकल्प दिया।

"हर आदमी को आजाद होना चाहिए यही उनकी बुनियादी जरूरत है जब व्यक्ति आजाद होता है तब उसे अपने मन के भावों और विचारों को स्पष्ट रूप से दूसरों के सामने प्रकट करने का मौका मिलता है"2

महात्मा फुले ने अंग्रेजी राज देश की बहुसंख्यक जनता

के लिए सामाजिक गुलामी से मुक्ति का अवसर माना क्योंकि अंग्रेजों ने शिक्षा व्यवस्था में सभी वर्ग के बच्चों के लिए उपलब्ध करवाया था।ब्रिटिश शासन के दौरान भारतीय समाज जातिगत असमानताओं से ग्रस्त था। औपनिवेशिक सत्ता ने के ओर आधुनिक शिक्षा कानून और प्रशासनिक व्यवस्था दी वही दूसरी ओर आधुनिक शिक्षा व्यवस्था ने हिंदू धार्मिक ग्रंथो को चुनौती दी।

जो व्यवस्था अमानवीय है शोषण पर आधारित है मानवीय मूल्यों के खिलाफ है उसको बदलना जरूरी है ,इस व्यवस्था की जड़ कहां है उसे नष्ट करके इस व्यवस्था को बदला जा सकता है।ज्योतिबा फुले ने ' गुलामगिरी , के माध्यम से हिंदू समाज व्यवस्था को समझाया है कि ब्राह्मणवाद की जड़ी कहां है और इसे कैसे खत्म किया जा सकता है।इस तरह महात्मा ज्योतिबा फुले ने स्वाधीनता की मांग करते हैं जिसमें कोई भी किसी का गुलाम न बने ना ही शोषण का शिकार हो।

महात्मा गांधी ने दलितों के प्रति दया भाव दिखाकर अछूत से हरिजन शब्द दिए। 'हरिजन' ' जो मंदिरों में रहने वाली देवदासियों की अवैध संतानों को भी हरिजन कहा जाता था वही शब्द लेकर दलितों के ऊपर दलितद्धार के नाम पर दे दिए।गांधी ने छुआछूत का विरोध किया लेकिन वर्ण व्यवस्था को ईश्वरदत्त उत्तम व्यवस्था मानते थे। जिससे स्पष्ट होता है कि गांधी जी ने जाति व्यवस्था को हिंदू के लिए उत्तम माने सिर्फ छुआछूत नहीं करने का सलाह दिए। जो इस व्यवस्था में सहानभूति मात्र रही है जिसके कारण अंबेडकर एवं गांधी के बीच मतभेद भी हुआ था। अंबेडकर वर्ण व्यवस्था को मिटा देना चाहते थे गांधी उसके भीतर सुधार करना चाहते थे

डॉ.भीमराव अंबेडकर और दलित चेतना

डॉ. भीमराव अंबेडकर स्वाधीनता आंदोलन के दौरान दलित चेतना के सबसे सशक्त और वैचारिक नेता के रूप में उभरे उनका कथन है "जब तक आप सामाजिक स्वतंत्रता नहीं हासिल कर लेते ,कानून आपको जो भी स्वतंत्रता देता है वह आपके किसी काम की नहीं है।"3अंबेडकर अशपृश्य महार जाति के थे, उन्होंने स्वयं छुआछूत की दमन की पीड़ा सही है इसलिए देश की आजादी से पहले अस्पृश्यता का सवाल को सुलझा लेना चाहते थे।अंबेडकर के अनुसार जातीयता और राष्ट्रपति सीता हिंदू समाज में एक स्टील प्रेम की तरह सामान्य हिंदू इसे धर्म का हिस्सा मानता है हिंदुओं के लिए अस्पृश्यता को मनाना धार्मिक प्राथमिकता है और ना मानना पापा।

जब तक यह मान्यता प्रचलित रहेगी अस्पृश्यता बनी रहेगी।पहली बार अंबेडकर के नेतृत्व में दलितों को सार्वजनिक तालाबों से पानी पीने के अधिकार को लेकर महार आंदोलन शुरू किया गया जिसके तहत छुआछूत का अवैध घोषित किया गया तथा मनुस्मृति को सार्वजनिक दहन किए। उन्होंने कहा था "मनुवाद को जड़ से समाप्त करना मेरे जीवन का प्रथम लक्ष्य है।"4

स्वतंत्रता पूर्व या स्वतंत्र भारत में जितने भी दलित नरसंहार हुई हैं उनके पीछे कहीं ना कहीं हिंदू धर्म की वर्ण व्यवस्था ही थी।

इस वर्ण व्यवस्था के खिलाफ आन्दोलन सिद्ध ,नाथ, कबीर , फुले, पेरियार और अंबेडकर ने किए। अभी भी चल रही है बस इस परंपरा में कुछ सुधार आई है लेकिन खत्म नहीं हो रही है स्वतंत्रता के बाद संविधान का निर्माण हुआ तो उसके तहत प्रत्येक व्यक्ति को मौलिक अधिकार प्राप्त हुआ दलितों के लिए कुछ ऐसी एक्ट का निर्माण किया गया, जिसके उपरान्त अपने ऊपर होने वाले शोषण से संवैधानिक रूप से न्याय की मांग कर सकते हैं लेकिन जमीनी स्तर पर वर्तमान समय में भी दलितों की स्थिति बदतर है।डॉ अंबेडकर ने दलित

चेतना को जागृत करने में अपना संपूर्ण जीवन समर्पित करती है उन्होंने नैतिक स्तर पर दलितों के अधिकार को दिलाने के लिए निस्वार्थ भावना से आजीवन संघर्ष करते रहे उन्होंने कहा है।

“रात-रात भर में इसीलिए जगाता हूं क्योंकि मेरा समाज सो रहा है ।”5

डॉ अंबेडकर ने जातिवाद ,संप्रदायिकता ,सामंतवाद ,ब्राह्मणवाद और विषमता के खिलाफ विरोध किया । जिसमें महार सत्याग्रह सन् 1927 में इसमें ढाई हजार दलित अछूतों के साथ चावदार तालाब के पानी अछूतों के लिए पीने का अधिकार दिलाने के लिए प्रथम आंदोलन के किया संघर्ष एवं विरोधों का सिलसिला चलता रहा जिसमें सफलता और असफलता भी शामिल था । 25 दिसंबर 1927 महार में मनुस्मृति को खुलेआम दहन किया जातिगत उत्पीड़न का आधार मनुस्मृति को भी माना जाता रहा है जिसमें शुद्रो को घृणित कार्य करने हेतु बाध्य किया गया है इसीलिए मनुस्मृति के प्रति सम्पूर्ण दलितो वर्ग विरोध करता है ।

“जाति व्यवस्था के बारे में इस दृष्टि की आलोचना का एक तीसरा बिंदु भी है श्रम का यह विभाजन स्वतः स्फूर्त नहीं है ,इसका आधार प्राकृतिक रुझान है ।सामाजिक और व्यक्तिगत दक्षता की मांग यह ‘है कि हम किसी भी व्यक्ति की क्षमता को इस ऊंचाई तक विकसित करे कि वह अपना व्यवसाय चुन सके और उसमें आगे बढ़ सके ।जाति व्यवस्था में इस सिद्धांत का उल्लंघन होता है क्योंकि यह व्यवस्था पहले से ही निर्धारित कर देती है कि किसी व्यक्ति का व्यवसाय क्या होगा मूल क्षमताओं के परीक्षण के आधार पर नहीं बल्कि इस बात पर की उसके माता-पिता की सामाजिक हैसियत क्या है ?”

हिंदू धर्म शास्त्रों में वर्ण व्यवस्था के साथ उसके द्वारा किए जाने वाले कार्य क्षेत्र भी बनाया ।जो जाति पर आधारित होती है जो जिस जाति का है जाति के अनुसार कार्य करेगा चाहे उसकी क्षमता उस कार्य को करने हेतु नहीं भी हो। बाबा साहेब अंबेडकर ने श्रम विभाजन और जाति प्रथा नामक निबंध तार्किक ढंग से इस प्रथा की कमी को स्पष्ट रूप से दर्शाए है। डॉ०अंबेडकर दलित चेतना के सबसे सशक्त वैचारिक और राजनीतिक प् प्रतिनिधित्व किए उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन के समानांतर दलित मुक्ति का स्वतंत्रता आंदोलन खड़ा किया सामाजिक समानता एवं मानवता को राष्ट्रीय विमर्श में स्थापित किए। वर्तमान समय में दलित चेतना के केंद्र में वैचारिक आधार समानता एवं बंधुता लिया गया है । वह बाबा साहेब की सामाजिक न्याय की अवधारणा की व्यापक शब्द है। जिससे न्याय प्रणाली प्राकृतिक न्याय की कसौटी पर खड़ा उतरने की चेष्टा करती है।

निष्कर्ष :

स्वतंत्रता आंदोलन और दलित चेतना का संबंध द्वंद्वात्मक है जहां एक और स्वतंत्रता आंदोलन ने प्रश्न को   राष्ट्रीय मंच दिया ,वही दलित चेतना ने स्वतंत्रता के अर्थ को व्यापक बनाया ।राजनीतिक मुक्ति से सामाजिक मुक्ति तक इस दृष्टि से दलित चेतना भारतीय लोकतंत्र की आत्मा है जो समानता और न्याय की सतत् मांग करती हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ :

1. फुले रचनावली भाग-1

2 गुलामगिरि की भुमिका पृष्ट सं०-14

3 अम्बेडकर विचारकोश पृष्ट सं० - 9

4 वही पृष्ट सं०–11

5 वही पृष्ट सं०-10

6 जाति का विनाश पृष्ट सं-58